PAPER-II SOCIOLOGY (HONOURS) PART-I

E. STUDY MATERIAL FOR B.A.-PART-I | BY-DR. RAMESH SINGH
G.D. COLLEGE, BAGAHA
Mob - 6394653523

Ques:- प्राथमिक एवं द्वितीयक समूह से आप क्या समझते हैं? इसकी व्याख्या कीजिए।

Ans:- अमरीकी समाजशास्त्री C.H. Cooley ने सन् 1909 ई० में अपनी पुस्तक 'Social Organization' में पहली बार प्राथमिक समूह (Primary Group) की अवधारणा को रखा। प्राथमिक समूह से उनका तात्पर्य लोगों के उस छोटे साहचर्य से है, जिनमें सदस्य एक दूसरे से भावनात्मक स्तर पर जुड़े होते हैं। प्राथमिक समूहों में परिवार, नातेदार, मित्र-मण्डली, छोटे-मोटे गाँव आदि सम्मिलित हैं। प्राथमिक समूह की अवधारणा कूले ने 20वीं शताब्दी के आरंभ में रखी थी। तब शायद समूह के इस प्रकार का अर्थ प्रासंगिक भी था। आज विकसित और विकासशील देशों में अनेक कारणों के संयुक्त प्रभाव से परिवार जैसे सशक्त प्राथमिक समूह को संदेह की दृष्टि से देखा जाने लगा है। सदस्यों के बीच तनाव, सम्पत्ति के बँटवारे को लेकर खींचा-तानी विवाह-विच्छेद आदि के कारण प्राथमिक समूह के रूप में परिवार संकट के कगार पर खड़ा है। ऐसा लगता है कि दुनिया भर के प्राथमिक समूह वैसे नहीं रहे, जैसे उनकी कल्पना कूले ने की थी।

कूले ने अपनी पुस्तक 'Social Organization' में लिखा है, "प्राथमिक समूह से मेरा तात्पर्य ऐसे समूह से है जिनकी विशेषता आमने-सामने के घनिष्ठ सहचर्य और सहयोग के रूप में व्यक्त होती है, ये समूह अनेक अर्थों में प्राथमिक हैं परन्तु मुख्य रूप से इस बात में कि वे व्यक्ति की सामाजिक प्रकृति और आदर्शों के निर्माण में मौलिक हैं। घनिष्ठ सहचर्य का परिणाम यह होता है कि एक सामान्य सम्पूर्णता में व्यक्तिकताओं का इस प्रकार एकीकरण हो जाता है कि प्राय: कई प्रयोजनों के लिए

व्यक्ति का अहम् समूह का सामान्य जीवन और उद्देश्य बन जाता है। इस सम्पूर्णता के वर्णन के लिए अति सरल विधि 'हम' कहना उचित होगा, क्योंकि यह अपने में इस प्रकार की सहानुभूति और पारस्परिक पहचान को समाविष्ट करता है। इसके लिए 'हम' ही स्वभाविक अभिव्यक्ति है।

कूले के अनुसार, होमन्स की पुस्तक 'The Human Groups' मोरेनो, ईवी वारनेत विलियम व्हाइट तथा राबर्ट रेडफिल्ड के अध्ययन प्राथमिक समूह के क्षेत्र में बहुत महत्वपूर्ण है। इन विद्वानों के अध्ययनों के आधार पर प्राथमिक समूह की कुछ विशेषताओं तथा लक्षणों को समझा जा सकता है :-

1. एक से अधिक व्यक्ति :- कूले ने जब प्रारंभ में प्राथमिक समूह की परिभाषा दी तब उन्होंने कहा कि समूह के लिए एक से अधिक सदस्यों का होना आवश्यक है। समूह के इस लक्षण को प्रायः सभी समाजशास्त्रियों ने अनिवार्य लक्षण के रूप में स्वीकार किया है।

2. संवेग :- कूले ने प्राथमिक समूह का दूसरा लक्षण संवेग बताया। ये संवेग हम की भावना को सुदृढ़ करते हैं। जब समूह के सदस्य संवेगात्मक रूप से जुड़े होते हैं तब बिना किसी हानी लाभ के चिंता करते हुए वे एकजुट रहते हैं।

3. पारस्परिक पहचान :- प्राथमिक समूह की एक और विशेषता पारस्परिक पहचान है। इसका तात्पर्य यह है कि व्यक्ति की समाज या समुदाय में पहचान अपने परिवार से होती है, अपने आप से वह कुछ नहीं है।

4. शारीरिक समीपता :- किंग्सले डेविस ने प्राथमिक समूह का बहुत बड़ा लक्षण शारीरिक समीपता को माना है। एक ही छत के नीचे रहने के कारण प्राथमिक समूह के सदस्य एक दूसरे को बहुत निकट से समझते हैं। ये सदस्य एक ही चुल्हे से भोजन, एक ही बटुए से खर्च करते हैं अतः सदस्यों के सम्पूर्ण जीवन का सरोकार प्राथमिक समूह से होता है।

5. लघु आकार :- डेविस का यह भी मानना है कि प्राथमिक समूहों का आकार छोटा होता है। अर्थात इसका आकार इतना छोटा है कि समूह के सदस्य एक दूसरे से आमने-सामने होकर संपर्क करते हैं जिनके फलस्वरूप उनके बीच अन्तःक्रिया होती है।

6. संबंधो की अवधी :- डेविस का यह भी मानना है कि प्राथमिक समूह के सदस्यों के बीच संबंधो की अवधी लम्बे समय के लिए होती है। संबंध जितने लम्बे समय के लिए होंगे, प्राथमिक समूह उतना ही सुदृढ़ और संगठित होगा। ग्रामीण परिवार पीढ़ी-दर-पीढ़ी एक दूसरे से जुड़े रहते हैं।

7. सजातीयता :- प्राथमिक समूह के सदस्य चाहे पुरुष हो या स्त्री, छोटे हो या बड़े समान स्तर के होते हैं। सदस्यों के विचार, शिक्षा-दीक्षा और धन्धे में कोई बहुत बड़ा अंतर नहीं होता। इसी कारण रेडफिल्ड सजातीयता को प्राथमिक समूहों का बहुत बड़ा लक्षण मानते हैं।

8. समान मानदण्ड और उद्देश्य :- होमन्स ने अपनी सम्पूर्ण पुस्तक में इस तथ्य पर जोर दिया है कि प्राथमिक समूह का एक निश्चित उद्देश्य होना चाहिए। सामान्य लक्षणों के साथ-साथ मानदंड भी समान होने चाहिए। यह नियम सभी सदस्यों पर समान रूप से लागु होता है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि जब आधुनिकीकरण के दौर में समाज अधिक से अधिक औद्योगिक बन रहा है तब प्राथमिक समूह की प्रकृति में भी अंतर आ रहा है। अब जहाँ वृहत् सामाजिक संगठन उभर रहे हैं वहाँ इन संगठनों में भी कई प्राथमिक समूहों का प्रादुर्भाव हो रहा है। फिर भी संक्षेप में कहा जा सकता है कि प्राथमिक समूह सम्पूर्ण समाज का सुक्ष्म स्वरुप है।

द्वितीयक समूह (Secondary Group)

कूले ने प्राथमिक समूह के

विवरण में द्वितीय समूह की चर्चा नहीं की है। शायद २० वीं शताब्दी के प्रारंभ में विदेशों में भी द्वितीयक समूहों का अधिक महत्व नहीं था। इसी कारण कूले ने प्राथमिक समूह की व्याख्या तक ही अपने आप को सीमित रखा। औद्योगीकरण और शहरीकरण के परिणाम स्वरुप द्वितीयक समूह महत्वपूर्ण होने लगे हैं। कूले के बाद के समाजशास्त्रियों ने द्वितीयक समूह की व्याख्या विशद् रुप से की है।

द्वितीयक समूह प्राथमिक समूह का विपरीत रुप है। इसमें न तो घनिष्ठता होती है, न व्यक्तिगत संबंध, न तो सुख-दुःख में सहभागिता होती है और न ही अपनापन। इन समूहों में सभी अपने स्वार्थ की अधिकतम पूर्ति में लगे होते हैं। इसी आधार पर किंग्सले डेविस ने परिभाषित करते हुए लिखा है कि "द्वितीयक समूह को कामचलाऊ रुप में प्राथमिक समूह के विपरीत समूह के रुप में परिभाषित किया जा सकता है।"
राबर्ट बीरस्टीड का कथन है "वे सभी समूह द्वितीयक हैं जो प्राथमिक नहीं हैं।"
आगबर्न एवं निमकॉफ के अनुसार, "वे समूह जो घनिष्ठता की कमी का अनुभव करते हैं, द्वितीयक समूह कहे जाते हैं।"

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर द्वितीयक समूह के कुछ लक्षण / विशेषताओं को स्पष्ट किया जा सकता है —

1. लोगों की एक समिति :— ये समूह मध्यम आकार से वृहत् आकार के होते हैं। इसी कारण लोग एक-दूसरे को जानते भी नहीं हैं। इन्हें समिति इसलिए कहा जाता है कि इनकी स्थापना सोच-समझकर विधिवत रुप से की जाती है। जैसे — अधिकारी तंत्र, व्यवसायिक संगठन आदि।

2. अवैयक्तिक संबंध :— द्वितीयक समूह के सदस्य व्यक्तिगत रुप से एक-दूसरे को नहीं जानते। बैंक काउन्टर पर जो व्यक्ति चेक लेता है वह कौन-सी जाति का है, कहाँ का रहने वाला है, आदि की

हमे कोई व्यक्तिगत जानकारी नहीं होती। हमारा उद्देश्य तो चेक का धन लेना होता है। अतः इनमें औपचारिक संबंध होता है।

3. निश्चित उद्देश्य :— इस समूह में व्यक्ति के जीवन की सम्पूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती। प्रत्येक संगठन के कुछ सीमित और निश्चित लक्ष्य होते है और ये संगठन इन लक्ष्यों की पूर्ति के लिए काम करते है, इनसे आगे नहीं।

4. समझौते के उल्लंघन पर दण्ड :— चूँकि इस समूहें के सदस्यों का संबंध एक समझौता अथवा नियम पर आधारित होता है जिसके उल्लंघन पर सदस्यों को दण्ड भोगना पड़ता है। अतः यह नियम ही द्वितीयक समूहें के सदस्यों के व्यवहार को नियंत्रित करता है।

5. परिवर्तनशील :— द्वितीयक समूह परिवर्तनशील होता है। इन समूहें की स्थापना व्यक्तियों की आवश्यकता के अनुसार होता है। जब व्यक्तियों की आवश्यकताएँ बदलती है तो इन समूहें का रूप भी बदलता है। इसलिए इसे अपेक्षाकृत अस्थायी समूह भी कहा जाता है।

6. मैं की भावना :— द्वितीयक समूह में मैं की भावना की अधिकता होती है। इसके सदस्यों में घनिष्ठता और अपनापन का अभाव पाया जाता है। हर एक अपने ही बारे में सोचते है। फलस्वरूप सभी सदस्य अपने हितों की अधिकतम पूर्ति हेतु आपस में प्रतिस्पर्धा करते है। ऐसे में व्यक्तिगत स्वार्थ ही प्रधान बन जाती है।

7. अप्रत्यक्ष सहयोग :— द्वितीयक समूह के सदस्यों में अप्रत्यक्ष संबंध पाया जाता है। सभी सदस्य अपने निर्धारित कार्य को करते है ताकि समूह का उद्देश्य पूरा हो सके। यानि ऐसे समूहों में व्यक्ति समूह हेतु कार्य करते है। ऐसे सहयोग को अप्रत्यक्ष सहयोग कहा जाता है।

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि द्वितीयक समूह की प्रकृति में औपचारिकता होती है। यहाँ लोगों में घनिष्ठता, अपनापन, व्यक्तिगत संबंध, त्याग आदि का अभाव होता है। सभी लोग अपने स्वार्थ सिद्धि में लगे होते है।